Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारत में किशोर न्याय के संवैधानिक और मानवाधिकार आयाम

श्रीमती प्रीती बुंदेला* डॉ. राम सिंह पटेल**

* शोधार्थी, महाराजा छत्रसाल बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
** सह-प्राध्यापक, पं. मोतीलाल नेहरू विधि महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – किशोर न्याय, एक प्रगतिशील और मानवीय कानूनी व्यवस्था की आधारशिला के रूप में, बच्चों के कल्याण और संरक्षण के प्रति राष्ट्र की प्रतिबद्धता को दर्शाता है। भारत में, संवैधानिक दृष्टिकोण और मानवाधिकार दायित्व मिलकर कानून का उल्लंघन करने वाले किशोरों और देखभाल एवं संरक्षण की आवश्यकता वाले बच्चों के समाधान हेतु रूपरेखा तैयार करते हैं। यह शोधपत्र भारत में किशोर न्याय के संवैधानिक और मानवाधिकार आयामों का अन्वेषण करता है, और उन कानूनी प्रावधानों, न्यायिक व्याख्याओं और अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं का विश्लेषण करता है जिन्होंने किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015 के विकास को प्रभावित किया है। यह किशोर अपराधों से निपटने में सुधार और निवारण के बीच संतुलन की भी जाँच करता है, विशेष रूप से 2012 के दिल्ली सामूहिक बलात्कार मामले के बाद, जिसने प्रमुख विधायी सुधारों को जन्म दिया। अध्न का निष्कर्ष है कि जहाँ भारत के संवैधानिक और अंतर्राष्ट्रीय दायित्व पुनर्वास और पुनर्एकीकरण पर आधारित बाल-केंद्रित दृष्टिकोण को अनिवार्य बनाते हैं, वहीं कार्यान्वयन में लगातार आने वाली कमियाँ, सामाजिक-आर्थिक कमजोरियाँ और प्रणालीगत सीमाएँ वास्तविक किशोर न्याय की प्राप्ति को चुनौती देती रहती हैं।

शब्द कुंजी – किशोर न्याय, मानवाधिकार, भारतीय संविधान, पुनर्वास, बाल अधिकार, किशोर न्याय अधिनियम 2015।

प्रस्तावना – कानून, बाल कल्याण और मानवाधिकारों के संगम पर किशोर न्याय एक अद्वितीय स्थान रखता है। यह इस दर्शन को मूर्त रूप देता है कि अपराध करने वाले बच्चों के साथ अपराधी जैसा व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि उन्हें ऐसे व्यक्ति के रूप में देखा जाना चाहिए जो सुधार और समाज में पुन: एकीकरण के योग्य हों। दुनिया की सबसे बड़ी बाल आबादी वाले देशों में से एक होने के नाते, भारत ने बाल संरक्षण और किशोर न्याय के लिए एक विस्तृत संवैधानिक और वैधानिक ढाँचा विकसित किया है।

भारत का संविधान अनुच्छेद 14, 15(3), 21 और 39 के तहत बच्चों सहित सभी व्यक्तियों को मौलिक अधिकारों की गारंटी देता है। यह राज्य को बच्चों के विकास के लिए सुरक्षा और अवसर सुनिश्चित करने का अधिकार देता है। ये प्रावधान, संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार सम्मेलन (यूएनसीआरसी) जैसे अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार दस्तावेजों के भारत द्वारा अनुसमर्थन के साथ, एक मानवीय और पुनर्वासात्मक किशोर न्याय प्रणाली के प्रति प्रतिबद्धता को रेखांकित करते हैं। हालाँकि, भारत की किशोर न्याय व्यवस्था का विकास पुनर्वास और प्रतिशोध के बीच तनाव से चिह्नित रहा है। किशोर न्याय (बालकों की देखभाल एवं संरक्षण) अधिनियम, 2015, जिसने 2000 के अधिनियम का स्थान लिया, ने जघन्य अपराधों के लिए 16-18 वर्ष की आयु के किशोरों पर वयस्कों की तरह मुकदमा चलाने का विवादास्पद प्रावधान पेश किया। यह बदलाव, हालाँकि राजनीतिक रूप से जन आक्रोश के प्रति उत्तरदायी था, लेकिन इसने भारत के संवैधानिक सिद्धांतों और अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों के पालन पर गंभीर प्रश्न खड़े कर दिए।

यह लेख इन आयामों का गहराई से अध्ययन करने का प्रयास करता है, यह मूल्यांकन करते हुए कि भारत का संवैधानिक और मानवाधिकार ढाँचा उसकी किशोर न्याय प्रणाली को कैसे प्रभावित करता है, और क्या वर्तमान व्यवस्था वास्तव में बाल अधिकारों और सामाजिक न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप है।

किशोर न्याय के संवैधानिक आयाम – भारत का संविधान बच्चों, जिनमें विधि-विरुद्ध बालक भी शामिल हैं, के संरक्षण, विकास और कल्याण के लिए मानक आधार प्रदान करता है। किशोर न्याय की अवधारणा को संवैधानिक गारंटियों से वैधता और शक्ति प्राप्त होती है जो प्रत्येक बालक की गरिमा और क्षमता की रक्षा करती हैं। भारतीय संवैधानिक ढाँचा मौलिक अधिकारों, राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों (DPSP) और मौलिक कर्तव्यों को मिलाकर बाल कल्याण के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है, जो भारत की किशोर न्याय प्रणाली के लिए नैतिक और कानूनी आधार का काम करता है।

किशोर, एक संवेदनशील सामाजिक समूह के सदस्य होने के नाते, विशेष देखभाल और सुरक्षा के हकदार हैं। संविधान निर्माताओं ने यह परिकल्पना की थी कि बच्चों के साथ, उनकी अपरिपक्वता और संवेदनशीलता के कारण, वयस्कों से अलग व्यवहार किया जाना चाहिए और उन्हें दंड के बजाय सुधार के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान किया जाना चाहिए। इस प्रकार, किशोर न्याय के संवैधानिक आयाम समानता के सिद्धांत और सम्मानपूर्वक जीवन के अधिकार, दोनों में निहित हैं, जिन्हें बचपन की रक्षा के लिए राज्य के निर्देश द्वारा बल मिलता है।

1. समानता और विशेष संरक्षण का अधिकार (अनुच्छेद 14 और 15)

अनुच्छेद 14 – विधि के समक्ष समता और विधियों का समान संरक्षण

अनुच्छेद 14 यह सुनिश्चित करता है कि प्रत्येक व्यक्ति विधि के समक्ष

समता और विधियों के समान संरक्षण का हकदार है। हालाँकि, सर्वोच्च न्यायालय ने लगातार यह माना है कि समानता का अर्थ सभी परिस्थितियों में समान व्यवहार नहीं है। राज्य को वास्तविक न्याय प्राप्त करने के लिए व्यक्तियों को उचित श्रेणियों में वर्गीकृत करने का अधिकार है। किशोर न्याय के संदर्भ में, किशोरों और वयस्कों के बीच वर्गीकरण संवैधानिक रूप से मान्य है क्योंकि यह एक सुबोध अंतर – बच्चों की मानसिक और मनोवैज्ञानिक अपरिपक्वता – पर आधारित है और इस वर्गीकरण का विधि के उद्देश्य, अर्थात् उनके सुधार और पुनर्वास, के साथ एक तर्कसंगत संबंध है। इस प्रकार, किशोर न्याय (बालकों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015, अनुच्छेद 14 से संवैधानिक औचित्य प्राप्त करता है क्योंकि यह मानता है कि बच्चों के साथ वयस्क अपराधियों से भिन्न व्यवहार किया जाना चाहिए। अधिनियम के अंतर्गत पृथक प्रक्रिया, संस्थागत ढाँचा और दण्ड–प्रणाली, उचित वर्गीकरण के इस सिद्धांत का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

अनुच्छेद 15(3) – बच्चों के लिए विशेष प्रावधान – अनुच्छेद 15(3) राज्य को महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष प्रावधान करने का अधिकार देता है। यह प्रावधान केवल समानता से आगे बढ़कर उनकी सुरक्षा और उन्नति के लिए सकारात्मक कार्रवाई की अनुमति देता है। किशोर न्याय कानून ऐसा ही एक विशेष उपाय है, जिसे यह सुनिश्चित करने के लिए तैयार किया गया है कि बच्चों को उनकी आयु, भेद्यता और विकासात्मक आवश्यकताओं के अनुरूप कानूनी सुरक्षा प्राप्त हो। गौरव जैन बनाम भारत संघ (1997) में सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि संविधान न केवल राज्य को बच्चों के सामाजिक और नैतिक विकास को सुनिश्चित करने के लिए विशेष प्रावधान करने की अनुमति देता है, बल्कि उसे ऐसा करने का आदेश भी देता है। इसलिए, विधि का उल्लंघन करने वाले किशोरों के साथ विशेष व्यवहार भेदभावपूर्ण नहीं है, बल्कि अनुच्छेद 15(3) से उत्पन्न एक संवैधानिक दायित्व है।

2. जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 21) – अनुच्छेद 21, जो यह गारंटी देता है कि 'किसी भी व्यक्ति को विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही उसके जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित किया जाएगा,'की व्यापक व्याख्या की गई है और इसमें मानवीय गरिमा, शिक्षा, सुरक्षा और विकास के साथ जीने का अधिकार भी शामिल है। यह प्रावधान किशोर न्याय का संवैधानिक आधार है। शीला बरसे बनाम भारत संघ (1986) में, सर्वोच्च न्यायालय ने घोषित किया कि बच्चों को जेलों में बंद रखना अनुच्छेद 21 का उल्लंघन है और अलग रिमांड और संप्रेक्षण गृह स्थापित करने का निर्देश दिया। इसी प्रकार, फ्रांसिस कोरली मुलिन बनाम केंद्र शासित प्रदेश दिल्ली (1981) में, न्यायालय ने जीवन के अधिकार की व्याख्या गरिमा और मानवीय परिस्थितियों के साथ जीने के अधिकार के रूप में की – ये सिद्धांत राज्य की हिरासत में बच्चों पर भी समान रूप से लागू होते हैं। इसलिए, किशोर न्याय प्रणाली अपना पुनर्वासात्मक और सुधारात्मक स्वरूप अनुच्छेद 21 से प्राप्त करती है। कोई भी कानून या प्रक्रिया जो बच्चों के साथ कठोर, अमानवीय या वयस्कों जैसा दंडात्मक व्यवहार करती है, असंवैधानिक होगी, क्योंकि यह उनके सम्मानपूर्वक जीवन जीने के अधिकार का उल्लंघन करेगी।

3. राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत (अनुच्छेद 39(ई), 39(एफ), 45 और 47)– यद्यपि ये निर्देशक सिद्धांत न्यायालयों द्वारा प्रवर्तनीय नहीं हैं, फिर भी ये नीतियाँ और कानून बनाने में राज्य का मार्गदर्शन करते हैं। ये किशोर न्याय की व्याख्या और कार्यान्वयन के लिए नैतिक दिशानिर्देश प्रदान करते हैं।

अनुच्छेद 39(ई) और (एफ): बाल्यावस्था और युवावस्था का संरक्षण अनुच्छेद 39(ई) राज्य को यह सुनिश्चित करने का निर्देश देता है कि 'श्रमिकों, पुरुषों और महिलाओं, तथा बच्चों की कोमल अवस्था के स्वास्थ्य और शक्ति का दुरुपयोग न हो,' जबकि अनुच्छेद 39(एफ) यह अनिवार्य करता है कि 'बच्चों को स्वस्थ तरीके से और स्वतंत्रता एवं गरिमा की परिस्थितियों में विकसित होने के अवसर और सुविधाएँ प्रदान की जाएँ।' यह इस बात पर भी जोर देता है कि बचपन और युवावस्था को शोषण, नैतिक और भौतिक परित्याग से बचाया जाए। ये सिद्धांत स्पष्ट रूप से दुर्व्यवहार, उपेक्षा और अपराध को रोकने के राज्य के कर्तव्य को मान्यता देते हैं, जो किशोर न्याय अधिनियम का दार्शनिक आधार है। स्वस्थ विकास और गरिमा पर जोर कानून का उल्लंघन करने वाले किशोरों के पुनर्वास, परामर्श और पुर्न:कीकरण के प्रावधानों में प्रति/वनित होता है। लक्ष्मी कांत पांडे बनाम भारत संघ (1984) में, सर्वोच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 39(f) का सहारा लेकर गोद लेने और बाल संरक्षण के मामलों में बच्चे के कल्याण की सर्वोपरिता पर जोर दिया, जिससे प्रत्येक बच्चे के विकास और गरिमा को सुरक्षित रखने के राज्य के कर्तव्य पर बल मिला।

अनुच्छेद 45 – प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा का प्रावधान 86वें संविधान संशोधन द्वारा संशोधित अनुच्छेद 45, राज्य को सभी बच्चों के लिए छह वर्ष की आयु पूरी करने तक प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा प्रदान करने का निर्देश देता है। यह अपराध के विरुद्ध एक महत्वपूर्ण निवारक उपाय है, क्योंकि प्रारंभिक बचपन की शिक्षा और देखभाल बाद के जीवन में भावनात्मक स्थिरता, सामाजिक उत्तरदायित्व और वैध व्यवहार के निर्माण में सहायक होती है।

अनुच्छेद 47 पोषण और सार्वजनिक स्वास्थ्य में सुधार के लिए राज्य के दायित्व पर बल देता है।

बाल स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता, यह स्वीकार करते हुए कि गरीबी, कुपोषण और उपेक्षा किशोर अपराध के मूल कारण हैं। सामाजिक–आर्थिक अभाव और किशोर अपराध के बीच संबंध इस बात पर जोर देता है कि किशोर न्याय केवल एक आपराधिक कानून का मुद्दा नहीं है, बल्कि संविधान के तहत एक विकासात्मक और कल्याणकारी चिंता का विषय है।

4. अनुच्छेद 23 और 24: शोषण से सुरक्षा – अनुच्छेद 23 तस्करी, बेगार (जबरन श्रम) और इसी तरह के शोषण का निषेध करता है। कानून का उल्लंघन करने वाले कई किशोर अपराध करने से पहले तस्करी, बाल श्रम या यौन शोषण के शिकार होते हैं। इसे स्वीकार करते हुए, संविधान ऐसे बच्चों को कड़ी सुरक्षा प्रदान करता है, यह सुनिश्चित करते हुए कि उनके साथ देखभाल और संरक्षण की आवश्यकता वाले पीड़ितों के रूप में व्यवहार किया जाए, न कि दंडित किए जाने वाले अपराधियों के रूप में।

अनुच्छेद 24 – खतरनाक व्यवसायों में बच्चों के रोजगार का निषेध अनुच्छेद 24 खतरनाक उद्योगों में 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों के रोजगार पर प्रतिबंध लगाता है। यह उन सामाजिक–आर्थिक कमजोरियों का समाधान करके किशोर न्याय को पूरक बनाता है जो बच्चों को कानून के साथ टकराव में धकेलती हैं। बाल श्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986 और बच्चों को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009

जैसे कानून इस संवैधानिक अधिदेश को क्रियान्वित करते हैं और किशोर न्याय के व्यापक निवारक ढाँचे में योगदान करते हैं।

5. मौलिक कर्तव्य (अनुच्छेद 51A)–अनुच्छेद 51A(k) माता–पिता या अभिभावकों पर छह से चौदह वर्ष की आयु के अपने बच्चों को शिक्षा के अवसर प्रदान करने का मौलिक कर्तव्य आरोपित करता है। यह प्रावधान बच्चों के पालन–पोषण और शिक्षा को सुनिश्चित करने में राज्य और समाज की साझा जिम्मेदारी को मान्यता देता है, और उन परिस्थितियों को रोकता है जो उन्हें अपराध की ओर ले जा सकती हैं। एक सुशिक्षित और सामाजिक रूप से एकीकृत बच्चे के कानून के साथ टकराव में आने की संभावना कम होती है।

6. न्यायिक व्याख्या और संवैधानिक विकास– भारत के सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों ने किशोर न्याय के संवैधानिक अर्थ को विस्तारित करने में निर्णायक भूमिका निभाई है। न्यायिक सक्रियता ने यह सुनिश्चित किया है कि बच्चों के अधिकारों को मौलिक अधिकारों और मानवीय गरिमा के व्यापक ढाँचे में शामिल किया जाए।

कुछ ऐतिहासिक निर्णयों में शामिल हैं:

1. **शीला बरसे बनाम भारत संघ (1986) –** न्यायालय ने कहा कि किशोरों को जेलों में बंद नहीं किया जाना चाहिए और उन्हें अलग सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए।
2. **एम.सी. मेहता बनाम तमिलनाडु राज्य (1996) –** न्यायालय ने बाल श्रम और किशोर न्याय को जोड़ा और शिक्षा को एक संवैधानिक अधिकार के रूप में महत्व दिया।
3. **सलिल बाली बनाम भारत संघ (2013) –** न्यायालय ने किशोर न्याय अधिनियम, 2000 को संवैधानिक मूल्यों और अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं के अनुरूप माना और कहा कि 'प्रतिशोधात्मक न्याय की तुलना में सुधारात्मक न्याय को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।'
4. **डॉ. सुब्रमण्यम स्वामी बनाम राजू (2014) –** न्यायालय ने किशोरों के लिए अलग व्यवहार निर्धारित करने की विधायी क्षमता को मान्यता दी, लेकिन आगाह किया कि ऐसे उपाय संवैधानिक सुरक्षा उपायों के अनुरूप होने चाहिए।

इन निर्णयों के माध्यम से, न्यायपालिका ने इस बात की पुष्टि की है कि किशोर न्याय प्रणाली संवैधानिक नैतिकता का एक विस्तार है, जिसका उद्देश्य बच्चों को दंडित करना नहीं, बल्कि उनकी रक्षा करना है।

7. मौलिक अधिकारों और नीति निर्देशक सिद्धांतों के बीच अंतर्संबंध– मौलिक अधिकारों और नीति निर्देशक सिद्धांतों के बीच तालमेल बच्चों के लिए संवैधानिक दृष्टिकोण की आत्मा है। जहाँ मौलिक अधिकार समानता और सम्मान जैसे प्रवर्तनीय अधिकारों की गारंटी देते हैं, वहीं नीति निर्देशक सिद्धांत इन अधिकारों को साकार करने के लिए सामाजिक–आर्थिक संदर्भ प्रदान करते हैं। इसलिए, किशोर न्याय अधिनियम को इस संवैधानिक संश्लेषण के विधायी अवतार के रूप में देखा जा सकता है, जो संरक्षण, शिक्षा और पुनर्वास के मूल्यों को प्रवर्तनीय प्रक्रियाओं और संस्थाओं में रूपांतरित करता है।

भारत में किशोर न्याय के मानवाधिकार आयाम– किशोर न्याय केवल एक घरेलू कानूनी चिंता नहीं हैय यह बच्चों के संरक्षण और कल्याण के व्यापक वैश्विक ढाँचे में अंतर्निहित एक मानवाधिकार अनिवार्यता है। कानून का उल्लंघन करने वाले बच्चों के साथ व्यवहार, मानवाधिकारों और सामाजिक न्याय के प्रति किसी राष्ट्र की प्रतिबद्धता की कसौटी है।

भारत में, किशोर न्याय के मानवाधिकार आयाम दो परस्पर जुड़े आधारों पर आधारित हैं:

1. विभिन्न सम्मेलनों, घोषणाओं और दिशानिर्देशों के तहत भारत के अंतर्राष्ट्रीय दायित्वय और
2. संवैधानिक व्याख्या और न्यायिक सक्रियता के माध्यम से विकसित मानवाधिकार न्यायशास्त्र।

ये सिद्धांत मिलकर इस बात पर जोर देते हैं कि प्रत्येक बच्चा, चाहे उसकी पृष्ठभूमि या अपराध कुछ भी हो, सम्मान, निष्पक्ष व्यवहार और सुधार एवं पुन: एकीकरण के अवसर का हकदार है। इस प्रकार, किशोर न्याय, आपराधिक कानून से आगे बढ़कर विकास के अधिकार, सम्मानपूर्वक जीवन के अधिकार, मनमाने ढंग से हिरासत में लिए जाने के विरुद्ध अधिकार और निष्पक्ष एवं मानवीय प्रक्रिया के अधिकार को भी समाहित करता है।

1. भारत में किशोर न्याय को प्रभावित करने वाले अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार उपकरण – किशोर न्याय (बालकों की देखभाल एवं संरक्षण) अधिनियम, 2015 सहित भारत का किशोर न्याय ढाँचा, अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों से गहराई से प्रभावित है। इन वैश्विक मानदंडों ने भारत की नीति और विधान को बाल–केंद्रित, पुनर्वासात्मक मॉडल की ओर अग्रसर किया है।

(क) संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार सम्मेलन (यूएनसीआरसी), 1989

भारत द्वारा 1992 में अनुसमर्थित यूएनसीआरसी, अंतर्राष्ट्रीय बाल अधिकार कानून की आधारशिला है। यह 18 वर्ष से कम आयु के प्रत्येक व्यक्ति को बालक के रूप में परिभाषित करता है और यह अनिवार्य करता है कि कानून तोड़ने के आरोपी प्रत्येक बच्चे के साथ उसकी गरिमा और मूल्य के सम्मान के साथ व्यवहार किया जाना चाहिए।

किशोर न्याय से संबंधित प्रमुख प्रावधानों में शामिल हैं:

1. **अनुच्छेद 37(ख)–** किसी बच्चे को हिरासत में रखना या कारावास देना अंतिम उपाय होगा और कम से कम उचित अवधि के लिए होगा।
2. **अनुच्छेद 40–** यह सुनिश्चित करता है कि किसी अपराध के आरोपी बच्चों के साथ उनके सम्मान, मूल्य और समाज में पुन: एकीकरण की भावना के अनुरूप व्यवहार किया जाए।
3. **अनुच्छेद 3–** बच्चों से संबंधित सभी कार्यों में उनके सर्वोत्ताम हितों को प्राथमिकता दी जाएगी।
4. **अनुच्छेद 12–** बच्चों को न्यायिक और प्रशासनिक कार्यवाहियों में सुनवाई का अधिकार है।

किशोर न्याय अधिनियम, 2000 और बाद में 2015 का अधिनियम, भारतीय कानून को इन दायित्वों के अनुरूप बनाने के लिए लागू किया गया था, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि किशोर अपराधियों के साथ करुणा और विकासात्मक संवेदनशीलता के साथ व्यवहार किया जाए।

(ख) किशोर न्याय प्रशासन के लिए संयुक्त राष्ट्र मानक न्यूनतम नियम (बीजिंग नियम), 1985

बीजिंग नियम दुनिया भर में किशोर न्याय प्रणालियों के लिए व्यापक मानक निर्धारित करते हैं। वे इस पर जोर देते हैं:

1. विपथन और समुदाय–आधारित कार्यक्रमों के माध्यम से न्यायिक कार्यवाही से बचना।
2. स्थिति अपराधों (ऐसे कृत्य जो वयस्कों के लिए अपराध नहीं हैं, जैसे

स्कूल से अनुपस्थित रहना या भाग जाना) का गैर-अपराधीकण।
3. सजा में आनुपातिकता और हिरासत के दौरान मानवाधिकारों का सम्मान।

इन सिद्धांतों ने अलग किशोर न्याय बोर्ड बनाने और कारावास की बजाय पुनर्वास को बढ़ावा देने के भारतीय दृष्टिकोण का मार्गदर्शन किया है।

(ग) किशोर अपराध निवारण हेतु संयुक्त राष्ट्र दिशानिर्देश (रियाद दिशानिर्देश), 1990

रियाद दिशानिर्देश किशोर अपराध को जन्म देने वाली सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों का समाधान करके किशोर अपराध को रोकने पर केंद्रित हैं। वे निम्नलिखित की वकालत करते हैं:

1. परिवार और समुदाय-आधारित हस्तक्षेपय
2. शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षणय
3. संस्थागतीकरण को न्यूनतम करना।

ये विचार भारतीय संविधान के अंतर्गत राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों और किशोर न्याय अधिनियम के पुनर्वास संबंधी फोकस के अनुरूप हैं।

(घ) स्वतंत्रता से वंचित किशोरों के संरक्षण हेतु संयुक्त राष्ट्र नियम (हवाना नियम), 1990

ये नियम हिरासत में रखे गए किशोरों के लिए मानवीय परिस्थितियों का निर्धारण करते हैं, जिनमें शामिल हैं:

1. वयस्कों से अलगाव।
2. शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और पारिवारिक संपर्क तक पहुँच।
3. क्रूर, अमानवीय या अपमानजनक व्यवहार का निषेध।

भारतीय न्यायालयों ने, विशेष रूप से शीला बरसे बनाम भारत संघ (1986) मामले में, किशोरों को वयस्कों के साथ बंदी बनाए रखने और अलग संप्रेक्षण गृहों में रहने का आदेश देने के लिए इसी तरह के सिद्धांतों का हवाला दिया है।

3. किशोर न्याय के आधारभूत मानवाधिकार सिद्धांत – किशोर न्याय का दर्शन उन प्रमुख मानवाधिकार सिद्धांतों पर आधारित है जो प्रत्येक बच्चे के लिए निष्पक्षता, सम्मान और पुनर्वास सुनिश्चित करते हैं।

(क) गरिमा और मूल्य का सिद्धांत – प्रत्येक बच्चे में, चाहे उसके कर्म कुछ भी हों, अंतर्निहित गरिमा होती है। किशोर न्याय का केंद्र दंड नहीं, बल्कि सुधार और सामाजिक पुनर्मिलन है। बीजिंग नियम और यूएनसीआरसी इस बात पर जोर देते हैं कि बच्चों के साथ कभी भी अपराधी जैसा व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि उन्हें मार्गदर्शन और सहायता की आवश्यकता वाले व्यक्तियों के रूप में माना जाना चाहिए।

(ख) भेदभाव न करने का सिद्धांत – मानवाधिकार कानून सभी बच्चों के लिए समान सुरक्षा का आदेश देता है। भारतीय कानूनी ढांचा संविधान के अनुच्छेद 14 और किशोर न्याय अधिनियम की धारा 3 के माध्यम से इस सिद्धांत को कायम रखता है, जिसके अनुसार धर्म, जाति, लिंग या सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि जैसे आधारों पर कोई भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए।

(ग) बाल हित का सिद्धांत – यूएनसीआरसी (अनुच्छेद 3) का मूल सिद्धांत यह है कि बच्चों से संबंधित सभी कार्यों - न्यायिक, प्रशासनिक या विधायी - में उनके सर्वोत्तम हित सर्वोपरि होने चाहिए। भारतीय न्यायालयों ने, एल.के. पांडे बनाम भारत संघ (1984) जैसे मामलों में, बाल-संबंधी निर्णयों के लिए इस सिद्धांत को निरंतर मार्गदर्शक के रूप में स्वीकार किया है।

घ) निष्पक्ष सुनवाई और कानूनी सहायता का अधिकार – यूएनसीआरसी के अनुच्छेद 40 और भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत, कानून का उल्लंघन करने वाले प्रत्येक बच्चे को कानूनी सहायता, भागीदारी और निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार है। अधिनियम के तहत स्थापित किशोर न्याय बोर्ड यह सुनिश्चित करते हैं कि कार्यवाही बाल-अनुकूल, अनौपचारिक हो और आपराधिक प्रक्रिया की कठोरता के बजाय सामाजिक और मनोवैज्ञानिक समझ से निर्देशित हो।

(ङ) पुनर्वास और पुर्न:कीकरण का सिद्धांत – मानवाधिकार न्यायशास्त्र किशोरों के लिए प्रतिशोध को अस्वीकार करता है, और इसके बजाय समाज में उनके पुर्न:कीकरण पर ध्यान केंद्रित करता है। किशोर न्याय अधिनियम, 2015 की धारा 3(xii) इस बात को स्पष्ट करती है कि पुनर्वास और सामाजिक पुन: एकीकरण, किसी भी बच्चे के संबंध में किसी भी निर्णय का प्राथमिक उद्देश्य होना चाहिए।

बहस: किशोर न्याय अधिनियम, 2015 और मानवाधिकार संबंधी चिंताएँ

किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015 ने 16-18 वर्ष की आयु के किशोरों पर उनकी मानसिक और शारीरिक क्षमता के प्रारंभिक आकलन के आधार पर जघन्य अपराधों के लिए वयस्कों की तरह मुकदमा चलाने की अनुमति देकर, पहले के मॉडलों से एक महत्वपूर्ण बदलाव किया।

यद्यपि इस प्रावधान का उद्देश्य 2012 के दिल्ली सामूहिक बलात्कार मामले के बाद जनाक्रोश को दूर करना था, लेकिन इसने गंभीर मानवाधिकार और संवैधानिक चिंताओं को जन्म दिया।

(क) अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं का उल्लंघन – संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार संरक्षण आयोग (यूएनसीआरसी) स्पष्ट रूप से 18 वर्ष से कम आयु के व्यक्तियों पर वयस्कों की तरह मुकदमा चलाने पर रोक लगाता है। इस भेद को लागू करके, भारत ने 'बच्चों के सर्वोत्ताम हित' सिद्धांत और अंतर्राष्ट्रीय किशोर न्याय मानदंडों के मूल में स्थित पुनर्वास आदर्श के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को कमजोर किया है।

(ख) व्यक्तिपरकता और मनमाने निर्णय लेने का जोखिम – किशोर न्याय बोर्ड द्वारा यह निर्धारित करने के लिए किया जाने वाला 'प्रारंभिक मूल्यांकन' कि क्या किसी बच्चे में वयस्क के रूप में मुकदमा चलाने की परिपक्वता है, अत्यधिक व्यक्तिपरकता का परिचय देता है। उचित मनोवैज्ञानिक विशेषज्ञता और प्रशिक्षण के बिना, ऐसे मूल्यांकन मनमाने या भेदभावपूर्ण परिणामों को जन्म दे सकते हैं, जो अनुच्छेद 21 के तहत निष्पक्ष प्रक्रिया के अधिकार का उल्लंघन करते हैं।

(ग) पुनर्वास दर्शन का क्षरण – मानवाधिकार कानून इस बात की वकालत करता है कि कोई भी बच्चा सुधार से परे नहीं है। हालाँकि, 2015 का संशोधन प्रतिशोध और निवारण पर ध्यान केंद्रित करता है, जिससे बाल संरक्षण और पुनर्स्थापनात्मक न्याय में दशकों की प्रगति कमजोर होती है।

(घ) हाशिए पर पड़े बच्चों पर असमानुपातिक प्रभाव – अध्ययनों से पता चलता है कि कानून का उल्लंघन करने वाले किशोरों का एक बड़ा हिस्सा गरीब या सामाजिक रूप से हाशिए पर रहने वाली पृष्ठभूमि से आता है। वयस्क मुकदमे का प्रावधान इन बच्चों को असमानुपातिक रूप से प्रभावित

करता है, जो समानता और सामाजिक न्याय के मानवाधिकार सिद्धांत का उल्लंघन करता है।

किशोर न्याय में मानवाधिकार मुद्दों पर न्यायिक प्रतिक्रियाएँ – भारतीय न्यायालयों ने न्याय प्रणाली के अंतर्गत बच्चों के मानवाधिकारों की रक्षा के लिए अक्सर हस्तक्षेप किया है।

1. **शीला बरसे बनाम भारत संघ (1986)–** सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि बच्चों को जेलों में नहीं रखा जाना चाहिए और उनके साथ मानवीय व्यवहार, शिक्षा और पुनर्वास पर जोर दिया।
2. **सलिल बाली बनाम भारत संघ (2013)–** न्यायालय ने 2000 के अधिनियम की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखा और इस बात पर जोर दिया कि ध्यान पुनर्वास पर होना चाहिए, न कि प्रतिशोध पर।
3. **डॉ. सुब्रमण्यम स्वामी बनाम राजू (2014)–** आयु सीमा पर कानून बनाने के संसद के अधिकार को बरकरार रखते हुए, न्यायालय ने आग्रह किया कि सभी प्रक्रियाएँ संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार आयोग (यूएनसीआरसी) के तहत भारत के दायित्वों के अनुरूप होनी चाहिए।
4. **विषय– अनाथालयों में बच्चों का शोषण (2017)–** सर्वोच्च न्यायालय ने राज्यों को बाल देखभाल संस्थानों की स्थितियों में सुधार करने का निर्देश दिया, और स्वतंत्रता से वंचित बच्चों के मानवाधिकारों को मान्यता दी।

इस प्रकार, न्यायिक व्याख्या ने इस विचार को लगातार पुष्ट किया है कि किशोर न्याय एक मानवाधिकार मुद्दा है, जो गरिमा, करुणा और निष्पक्षता पर आधारित है।

राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार निकायों की भूमिका

क) राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (एनएचआरसी) – एनएचआरसी किशोर गृहों की निगरानी, मानवीय व्यवहार के लिए दिशानिर्देश जारी करने और बाल न्याय प्रणाली में सुधारों की सिफारिश करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है। इसकी आवधिक रिपोर्टों ने संप्रेक्षण गृहों में भीड़भाड़, परामर्श का अभाव और मानवाधिकारों के उल्लंघन जैसी प्रणालीगत समस्याओं का खुलासा किया है।

ख) राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग (एनसीपीसीआर) – बाल अधिकार संरक्षण आयोग अधिनियम, 2005 के तहत स्थापित, एनसीपीसीआर यह सुनिश्चित करता है कि सभी कानून, नीतियाँ और कार्यक्रम यूएनसीआरसी के सिद्धांतों के अनुरूप हों। यह नियमित रूप से बाल देखभाल संस्थानों का निरीक्षण करता है और किशोर न्याय सुधारों पर सलाह देता है।

ग) यूनिसेफ और अंतर्राष्ट्रीय वकालत – यूनिसेफ इंडिया किशोर न्याय तंत्र को मजबूत करने के लिए सरकारी एजेंसियों और गैर-सरकारी संगठनों के साथ सहयोग करता है, जिसमें प्रशिक्षण, बाल-अनुकूल न्यायालयों और डायवर्जन कार्यक्रमों पर ध्यान केंद्रित किया जाता है।

मानवाधिकार चुनौतीव्यवहार में परिवर्तन – एक विस्तृत कानूनी ढाँचे के बावजूद, किशोर न्याय में मानवाधिकारों की प्राप्ति कई व्यावहारिक चुनौतियों का सामना करती है:

1. अतिव्यस्त और संसाधनों से वंचित संप्रेक्षण गृह।
2. किशोरों के लिए अपर्याप्त कानूनी सहायता और मनोवैज्ञानिक समर्थन।
3. सामाजिक-आर्थिक पूर्वाग्रहकृअधिकांश किशोर हाशिए की पृष्ठभूमि से आते हैं।
4. मीडिया सनसनीखेजता, जो किशोर अपराधियों को शैतानी रूप में प्रस्तुत करती है और उनकी निजता और सम्मान के अधिकार को कमजोर करती है।
5. रिहाई के बाद पुनर्वास निगरानी का अभाव, जिसके कारण पुन: अपराध और सामाजिक बहिष्कार होता है।

ये चुनौतियाँ भारत के मानवाधिकार दायित्वों और किशोर न्याय प्रशासन की जमीनी हकीकत के बीच के अंतर को उजागर करती हैं।

मानवाधिकार-आधारित सुझाव

1. **पुनर्वास और विपथन कार्यक्रमों को मजबूत बनाएँ–** कारावास के समुदाय-आधारित विकल्पों का विस्तार करें और शिक्षा एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण पर ध्यान केंद्रित करें।
2. **किशोर न्याय बोर्डों की क्षमता बढ़ाएँ–** बच्चों के प्रति संवेदनशील और सूचित मूल्यांकन सुनिश्चित करने के लिए प्रशिक्षित मनोवैज्ञानिकों और सामाजिक कार्यकर्ताओं को शामिल करें।
3. **गोपनीयता और सम्मान की रक्षा करें–** किशोरों की पहचान उजागर होने से रोकने के लिए सख्त मीडिया नियम लागू करें।
4. **पुनर्स्थापनात्मक न्याय मॉडल को बढ़ावा दें–** मानवाधिकार मूल्यों के अनुरूप पीड़ित-अपराधी मध्यस्थता और सुलह कार्यक्रमों को प्रोत्साहित करें।
5. **आवधिक मानवाधिकार ऑडिट–** एनएचआरसीएनसीपीसीआर द्वारा बाल देखभाल गृहों और किशोर सुविधाओं के ऑडिट को संस्थागत रूप दें।
6. **जागरूकता और संवेदनशीलता–** मानवीय व्यवहार सुनिश्चित करने के लिए पुलिस, न्यायपालिका और परिवीक्षा अधिकारियों के लिए निरंतर मानवाधिकार प्रशिक्षण।

कार्यान्वयन में चुनौतियाँ

1. प्रगतिशील कानूनों के बावजूद, भारत में किशोर न्याय प्रणाली गंभीर चुनौतियों का सामना कर रही है:
2. संरक्षण गृहों और बाल कल्याण संस्थानों में अपर्याप्त बुनियादी ढाँचा।
3. मनोवैज्ञानिकों, परिवीक्षा अधिकारियों और सामाजिक कार्यकर्ताओं सहित प्रशिक्षित कर्मियों की कमी।?
4. बच्चों की सामाजिक-आर्थिक कमजोरी के कारण कानून के साथ टकराव के बार-बार चक्र चलते हैं।
5. विभिन्न हितधारकों - पुलिस, न्यायपालिका और बाल संरक्षण इकाइयों - के बीच खराब समन्वय।
6. जनता की धारणा और मीडिया की सनसनीखेजता, जो अक्सर पुनर्वास के बजाय दंडात्मक न्याय की माँग करती है।

ये चुनौतियाँ संवैधानिक दृष्टिकोण और जमीनी हकीकत के बीच के अंतर को दर्शाती हैं।

आगे की राह:

1. **पुनर्वास को मूल सिद्धांत के रूप में पुन: स्थापित करें –** किशोर न्याय प्रणाली को अनुच्छेद 14, 21 और 39(f) के अनुरूप सुधारात्मक और पुनर्स्थापनात्मक दृष्टिकोणों को प्राथमिकता देनी चाहिए।
2. **संस्थागत क्षमता को मजबूत करें –** संप्रेक्षण गृहों और बाल कल्याण बोर्डों को बेहतर वित्त पोषण, बुनियादी ढाँचे और प्रशिक्षण की

आवश्यकता है।

3. **मनोवैज्ञानिक और सामाजिक पुर्न:कीकरण कार्यक्रम –** पुनरावृत्ति को कम करने के लिए परामर्श, व्यावसायिक प्रशिक्षण और रिहाई के बाद निगरानी आवश्यक है।
4. **कानून प्रवर्तन एजेंसियों का संवेदीकरण –** पुलिस और न्यायिक अधिकारियों को बाल अधिकारों और आघात-सूचित प्रक्रियाओं में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।
5. **जन जागरूकता और मीडिया उत्तरदायित्व –** जनधारणा मानवाधिकार सिद्धांतों के अनुरूप होनी चाहिए, जिससे दंडात्मक लोकलुभावनवाद को हतोत्साहित किया जा सके।

निष्कर्ष – भारत में किशोर न्याय के संवैधानिक और मानवाधिकार आयाम करुणा, समानता और मानवीय गरिमा के आदर्शों को मूर्त रूप देते हैं। हालाँकि संवैधानिक ढाँचा बच्चों के लिए विशेष सुरक्षा और पुनर्वास का आदेश देता है, और अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन इन दायित्वों को सुदृढ़ करते हैं, फिर भी इन आदर्शों का व्यावहारिक कार्यान्वयन चुनौतियों से भरा हुआ है। किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015, प्रगति और विरोधाभास दोनों का प्रतिनिधित्व करता है – बाल कल्याण तंत्रों को शामिल करने में प्रगतिशील, फिर भी किशोरों के लिए वयस्क मुकदमों की अनुमति देने में प्रतिगामी। एक सच्चे संवैधानिक और अधिकार-आधारित किशोर न्याय प्रणाली को प्रतिशोध से आगे बढ़कर सुधार, सामाजिक एकीकरण और प्रत्येक बच्चे की अंतर्निहित गरिमा पर ध्यान केंद्रित करना होगा। इन सिद्धांतों का पालन करना न केवल एक कानूनी आदेश है, बल्कि एक मानवीय और न्यायपूर्ण समाज के निर्माण की दिशा में एक नैतिक दायित्व भी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Constitution of India, 1950.
2. Sheela Barse v. Union of India, AIR 1986 SC 1773.
3. M.C. Mehta v. State of Tamil Nadu, AIR 1996 SC 699.
4. Salil Bali v. Union of India, (2013) 7 SCC 705.
5. Dr. Subramanian Swamy v. Raju, (2014) 8 SCC 390.
6. Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2015.
7. United Nations Convention on the Rights of the Child, 1989.
8. National Human Rights Commission, Annual Report on Child Rights, 2022.
9. UNICEF India, Children in Conflict with the Law: Policy and Practice Review, 2021.
10. Baxi, Upendra. The Future of Human Rights. Oxford University Press, 2012.
11. Bajpai, Asha. Child Rights in India: Law, Policy, and Practice. Oxford University Press, 2018.

****